ओ३म्

वैदिक संस्कृति का उद्घोषक

वैदिक सार्वदेशिक

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली का साप्ताहिक मुख-पत्र

शुल्क :- एक प्रति 5 रुपया (भारत में) वार्षिक 250 रुपये तथा आजीवन 2500 रुपये

वर्ष 14 अंक 26 कुल पृष्ठ-8 11 से 17 अप्रैल, 2019 दयानन्दाब्द 194 सृष्टि सम्वत् 1960853120 सम्वत् 2076 चै. शु.-07

आर्य समाज स्थापना दिवस के अवसर पर महर्षि दयानन्दधाम अमृतसर के तत्वावधान में वैदिक सांस्कृतिक विरासत संभाल कार्यक्रम 'आर्य गौरव दिवस' के रूप में मनाया गया

वैदिक संस्कृति की विरासत 'वसुधैव कुटुम्बकम्' है

– स्वामी आर्यवेश

हम सबका है ऐलान घर–घर पहुंचे वेद ज्ञान

– ओम प्रकाश आर्य

संस्कृति की सुरक्षा के लिए आर्य समाज करेगा बढ़–चढ़ कर कार्य

– अश्विनी शर्मा एडवोकेट

महर्षि दयानन्द धाम, बाजार हंसली, अमृतसर के तत्वावधान में दिनांक 7 अप्रैल, 2019 को स्थानीय एस.एल. भवन्स स्कूल, नियर भाईयां शिवाला में आर्य समाज स्थापना दिवस के अवसर पर वैदिक संस्कृति विरासत संभाल कार्यक्रम के अन्तर्गत 'आर्य गौरव दिवस' का भव्य कार्यक्रम आयोजित किया गया। इस कार्यक्रम की अध्यक्षता आर्य विद्या सभा, गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार के प्रधान श्री ओम प्रकाश आर्य ने की।

इस अवसर पर सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आर्यवेश जी मुख्यअतिथि के रूप में विशेष रूप से आमंत्रित थे। उनके अतिरिक्त स्थानीय विधायक श्री इन्द्रबीर सिंह बुलारिया अमृतसर, आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब के प्रधान श्री अश्विनी शर्मा एडवोकेट, महंत श्री रमेशानन्द सरस्वती राष्ट्रीय अध्यक्ष एन्टीक्रप्शन मोर्चा, श्री अरविन्द मेहता उपप्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा, नवांशहर के श्री सुलक्षण सरीन उपप्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा, चंडीगढ़ से श्री सोमदत्त शास्त्री उपप्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा, श्री जवाहर लाल मेहरा अमृतसर, लुधियाना से श्री देवपाल आर्य सभा उपप्रधान, श्री वीरेन्द्र सहदेव अमृतसर, श्री शिव कुमार धीर लुधियाना, गुरदासपुर से श्री तरसेम लाल आर्य सभा मंत्री, ब्र. दीक्षेन्द्र आर्य प्रधान सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् हरियाणा आदि मंच पर उपस्थित थे। कार्यक्रम का शुभारम्भ ज्योति प्रज्ज्वलन व वैदिक मन्त्रोच्चारण के साथ किया गया।

इस अवसर पर अपने उद्बोधन में श्री ओम प्रकाश आर्य ने कहा कि आज से 145 वर्ष पूर्व महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आर्य समाज की स्थापना की थी। आर्य समाज की स्थापना का उनका एक व्यापक दृष्टिकोण था। उन्होंने समाज में फैली सामाजिक कुरीतियों को दूर करने के लिए अथक प्रयास किये और वे उसमें सफल भी रहे। लेकिन आज पुनः समाज जात–पात, छुआछूत, पाखण्ड, भ्रष्टाचार, नशाखोरी से ग्रसित होता जा रहा है। आज आर्य समाज का कार्य और अधिक बढ़ गया है अतः हम सबको मिलकर उपरोक्त बुराईयों को दूर करने के लिए अथक प्रयास करने होंगे। उन्होंने बच्चों को संस्कारित करने की आवश्यकता पर बल देते हुए कहा कि आज टी.वी. चैनल और विभिन्न इलेक्ट्रानिक माध्यमों से हमारी प्राचीन संस्कृति को नष्ट करने का षड्यन्त्र रचा जा रहा है। धार्मिक पाखण्ड आज चरम पर है। हमारे बच्चे पाश्चात्य संस्कृति की ओर आकृष्ट हो रहे हैं जिसके कारण नैतिकता का नितान्त अभाव होता

शेष पृष्ठ 4 पर

सम्पादक - प्रो. विट्ठलराव आर्य

राम नवमी पर विशेष

श्री राम का बहुआयामी व्यक्तित्व

– मनुदेव 'अभय' विद्यावाचस्पति

मर्यादा पुरुषोत्तम राम का स्मरण आते ही त्रेतायुग की विशेषताओं का ध्यान आ जाता है। काल चक्र का इतिहास सदा से चलता आया है, सम्प्रति चल रहा है और प्रलय आने तक चलता रहेगा। प्रामाणिक तथ्यों के अनुसार रामचन्द्र जी को आज से 8,90000 लाख वर्ष हो चुके हैं। हमारी काल गणना सतयुग (17,28000 वर्ष) त्रेतायुग (12,96000 वर्ष) द्वापर युग (864,000 वर्ष) तथा कलियुग (8,32,000 वर्ष) कुलयोग 43,20,000 वर्ष माने गए हैं। पश्चिमी विद्वानों ने अपने भौतिक ज्ञान के अनुसार काल का वर्गीकरण इस प्रकार किया है:-

1. पाषाणकाल 20,000 ई. पूर्व (घुमन्तू, शिकारी जीवन), 2. नव पाषाण काल 8,000 वर्ष ई. पूर्व, 3. ताम्रयुग 4,000 ई. पूर्व (धातु की खोज, कृषि आधारित नगरों की बसाहट, 4. कांस्ययुग 3,000 ई. पूर्व (भारतीय सभ्यता का विकास) तथा अंतिम लौह युग 1,800 ई. पूर्व (आवागमन व्यापारिक क्रांति तथा पुराने युग की समाप्ति।

पश्चिमी सभ्यता के नापने का मानदंड ईसा की जन्म तिथि है, जब कि वैदिकी वर्षों को जानने का मापदण्ड सृष्टि उत्पत्ति से माना गया है। भारतीय गणित ज्योतिष के अनुसार सावन-1984456003, कल्प-1972949104, मानव 1955885104 तथा कलि 5104 वर्ष है। इन तथ्यों से स्पष्ट हो जाता है कि पश्चिमी जगत के विद्वानों का काल गणना का मापदण्ड हम वैदिकों से कितना पिछड़ा हुआ है। एक विद्वान ने ठीक ही कहा है कि जिन दिनों हमारे यहां उपनिशद काल में ऋषि मुनिगण उच्चकोटि का चिन्तन कर रहे थे उन दिनों पश्चिमी जगत के विद्वानों के पूर्वज जंगली अवस्था में बन्दरों के समान वृक्षों की डालियों पर उछल कूद रहे थे। भारतीय आर्य ऋषिगण जब यूरोप आदि होते हुए वहां पहुंचे, तब वहां सभ्यता और संस्कृति सम्बन्धी किरणों का आभास उन्हें जंगलियों को हुआ था। हमारे आर्य पूर्वज वहीं बस गये और वहीं रहकर ज्ञान का प्रचार-प्रसार किया। विश्व को संस्कृति और सभ्यता का ज्ञान देने वाला भारत (भा=प्रकाश, रत=प्रसारक) ही है।

जयशंकर प्रसाद के शब्दों में हम कहीं बाहर से नहीं आये थे अर्थात् भारतीय आर्य ही अपने नाम के अनुसार 'ज्ञान, भक्ति और गमन' निन्तर आगे बढ़ते गए। हमारे यहां ही नालन्दा और तक्षशिला के महान शिक्षालयों में पश्चिमी जगत के देशों के लोग शिक्षा ग्रहण करने आते थे।

इन तीनों प्रकारों की कालगणना प्रस्तुत करने का एकमात्र कारण यह है कि अनेक इतिहासकार या तो राम के जन्म को मानते ही नहीं हैं, यदि स्वीकार करते हैं तो उन्हें 6 या 7 हजार वर्ष पूर्व का ही मानते हैं। कतिपय विद्वान् राम-रावण का युद्ध को अद्यतन रागात्मक प्रवृत्तियों का संघर्ष मानकर संतोष कर लेते हैं। ऐसे विद्वान् हीन भावनाओं से ग्रसित दिखाई देते हैं।

मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम को हमने भगवान कहा है, परन्तु भगवान की यह परिभाषा है-

ऐश्वर्यस्य, समग्रस्य, वीर्यस्य, यशसाः श्रियः।

ज्ञान, वैराग्य, योश्चैव षण्णा भग इतिरणा अर्थात् ऐश्वर्य, वीर्य (पराक्रम) यश, श्री, ज्ञान तथा वैराग्य इन 6 गुणों से युक्त (अलंकृत) मनुष्य ही भग् वानूकहलाता है। यह पद स्थापना ऐसे गुण धारियों को समाज प्रदान करता है। परमात्मा और भगवान इन दो शब्दों में आकाश- पाताल का अन्तर होता है। परमात्मा सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान तथा न्यायकारी और दयालु होता है। जबकि भगवान जीवात्मा

होने के कारण अल्पज्ञ, अल्प सामर्थ्य वाला, रज-वीर्य उत्पन्न, जरामरण वाला तथा एक वेशीय होता है।

हमारे आराध्य मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम अनेक लौकिक गुणों से परिपूर्ण थे। उनके सम्पूर्ण जीवन पर दृष्टिपात करने पर निम्न लिखित विशेषताएं इस प्रकार हैं।

1. छोटों को प्रोत्साहन- बाल्यकाल में एक बार राम और भरत कन्दुक क्रीड़ा कर रहे थे। खेल अन्तिम दौर में था, विजय श्री राम के पक्ष में थी। गेंद राम के पाले में थी, किन्तु जीतने की स्थिति में भी राम ने गेंद भरत की ओर फेंक कर उन्हें विजयी घोषित करा दिया। यह थी अपने अनुजों के प्रति उदार भावनाएं।

2. किशोरावस्था- राम सदैव खतरों को जानबूझ कर लेते थे। विश्वामित्र जी ने जब राजा दशरथ से अपने किशोर बालकों को वन में यज्ञों की रक्षा के लिए तथा राक्षसों के हनन के लिए मांगा, तो बूढ़े दशरथ को अपनी सन्तानों के प्रति मोह उमड़ आया। पहले तो उन्होंने बहुत संकोच किया, किन्तु राम के आग्रह पर बच्चों को विश्वामित्र के साथ कर दिये। बाल्मीकि रामायण तथा रामचरित मानस के बाल्यकाण्ड में उन किशोरों के द्वारा आश्चर्य में डाल देने वाले कार्य इसके लिए पर्याप्त प्रमाण है कि राम लक्ष्मण ने किशोरावस्था में ही जानबूझ कर अनेक खतरे (चैलेन्ज) मोल लिये और उन पर विजय श्री प्राप्त कीं यह उनके चरित्र की विशेषता थी।

3. यद्यपि बहु विवाह प्रथा परिवार में बड़े-बड़े कलह उत्पन्न कर देती है, परन्तु राम ने अपनी मेधावृत्ति के अनुसार, दूरगामी परिणामों को देखते हुए अत्यन्त दूरदर्शितता का परिचय दिया। वे अपनी विमाता कैकेयी का सम्मान जन्मदायी माता कौशल्या से भी अधिक करते थे।

लक्ष्मण को अनेक बार उन्होंने समझाया कि माता कैकेई में हम तीनों भाईयों के प्रति कोई द्वेष नहीं है। राम ने वन गमन करते समय अत्यन्त श्रद्धा से माता कौशल्या के पहले विमाता कैकेई के चरण स्पर्श कर उनका आशीर्वाद मांगा था। भरत जब चित्रकूट में अपनी जन्मदायी माता कैकेई की आलोचना करने लगे, तब राम ने उन्हें, तत्काल आगे बोलने से रोक दिया। उन्होंने वहां भी माता कैकेई की भूरि-भूरि प्रशंसा की। इस प्रकार परिवार को कलह से बचा लिया। सहो असि सहोमहिधेहि चित्रकूट में राम, सीता और लक्ष्मण यदि चाहते तो उन्हे अनेक लौकिक सुविधाये प्राप्त हो सकती थीं। किन्तु राम के सम्मुख एक आदर्श था महान् उद्देश्य की पूर्ति के लिए यदि घोर से घोर कष्ट उठाने पड़े तो भी 'सहो असि' की भावना के अनुसार कष्ट सहन करने के लिए सदा तैयार रहो, यह आदर्श उनके सामने था। उन्होंने वहां अनेकानेक कष्ट उठाये, परन्तु वहां के वनवासियों से कुछ भी सहायता कभी नहीं मांगी। रामायण इस बात का प्रमाण है कि यहीं से राम के जीवन का सबसे अधिक कष्ट पूर्ण जीवन और घटनाएं प्रारम्भ हुई। किन्तु वे तनिक भी टस से मस नहीं हुए।

5. सामाजिक न्याय के समर्थकः- वनवास के समय जब उनकी 'शबरी' से भेंट हुई, तो वे उसके निश्चल व्यवहार पर मुग्ध हो गये। शबरी द्वारा दिये गये खट्टे-मिट्ठे बेर उन्होंने प्रसन्नता पूर्वक खा लिए। यह बात निराधार है कि शबरी उन बेरों को मुख से चख कर देती थी और राम उन झूठे बेरों को खाने लगे थे। हमारे यहां झूठा भोजन न करना तथा किसी अन्य को झूठा भोजन, फिर चाहे वह फल ही क्यों न हो, भेंट न करने की वैदिक प्रथा है। राम तो भीलनी के स्नेह और सेवा भाव पर अत्यन्त मुग्ध थे। उन्होंने उसके साथ उदारतापूर्ण व्यवहार किया।

6. नारीजाति के उद्धारकः- वनवासी जीवन में अहिल्या से भेंट होने पर जब उसके साथ यौन शोषण की बात सुनी, तब उन्होंने उसे धैर्य बंधाया। उसके पति गौतम को समझाया तथा यौन शोषक इन्द्र को दण्ड देने का आश्वासन दिया। राम के द्वारा यह कृत्य भारतीय इतिहास में बहुत ही महत्वपूर्ण माना जाता है।

7. एक पत्नीव्रतधारीः- एक अवसर पर शूर्पनखा उनके सम्मुख विवाह का प्रस्ताव रखती है। राम ने कहा- पर नारी पैनी छुरी, तीन ठोर ते खाय। धन हरे, यौवन हरे, मरे नरक ले जाय। कहते हैं, इस संसार में तीन प्रकार के अंधे होते हैं। यथा धनान्ध, कामान्ध और मदान्ध। शूर्पनखा कामान्ध थी, इस कारण उसे विवेक से काम करने का मार्ग नहीं सूझता था। वह राज परिवार की स्त्री थी।उसके आत्मसमर्पण को अस्वीकार कर राम ने उसकी प्रतिष्ठा रूपी नाक काट कर रख दी। नीतिकार ने ठीक ही कहा कि -प्रतिकार करने वाली स्त्री क्या नहीं कर सकती? शूर्पनखा ने ही अपनी प्रतिक्रिया स्वरूप अपने अग्रज रावण को मन गढ़न्त बातें कह कर उसे राम के विरूद्ध कर दिया। इस प्रकार उसने अपने भाई का परिवार व राज्य बरबाद करा दिया। यह घटना कामान्ध लोगों

शेष पृष्ठ 7 पर

उपनिषद् ज्ञान की उत्कृष्टता

– डॉ. भवानीलाल भारतीय

भारतीय दार्शनिक तथा आध्यात्मिक चिन्तन में वेदों के पश्चात् उपनिषदों को सर्वोपरि स्थान प्राप्त है। प्राय: यह धारणा प्रचलित है कि चतुर्वेद संहिताओं में जहां नाना प्रकार के यज्ञ-यज्ञादि कर्मकाण्डों का विधान है, वहां उपनिषदों में ही आध्यात्मिक ज्ञान का सुचारू विवेचन मिलता है, प्रकारान्तर से इस विचार का प्रतिपादन करने वाले लोगों का जोर आध्यात्मिक दृष्टि से संहिता भाग की अवगणना करने पर रहता है। किन्तु इस विचार में सत्य का अंश मात्र भी नहीं है। वस्तुत: वेदों में ऐसे सैकड़ों सूक्त हैं जो परमात्मा की सर्वोच्च सत्ता का मनोज्ञ स्वरूप प्रस्तुत करते हैं तथा जीव, प्रकृति, परलोक, मोक्ष जैसे दार्शनिक तत्त्वों पर भी प्रभूत प्रकाश डालते हैं। वेदों में आये हिरण्यगर्भ सूक्त, पुरुष सूक्त, अस्मवामीय सूक्त, नासदीय सूक्त आदि वे प्रसंग हैं जिनके दार्शनिक वैभव ने अशेष चिन्तक वर्ग को आश्चर्यान्वित कर रखा है।

शंकराचार्य आदि जिन अवान्तर कालीन दार्शनिकों ने अपने सिद्धान्तों की विवचेना में मुख्यतया उपनिषदों को ही उद्धृत किया है तथा उन्हें प्रस्थानत्रयी में प्रथम स्थान दिया, वे सम्भवत: इस तथ्य को भूल गये कि स्वयं उपनिषद् ने ही यह स्पष्ट घोषित किया है कि वेदों में उस परम तत्त्व को ओ३म् कह कर घोषित किया गया है –

सर्वे वेदा यत्पदमामनन्ति (कठ. 2/5)

उपनिषद्कार की यह आर्ष उक्ति वैदिक अध्यात्मवाद की तार स्वर से घोषणा करती है। इसी तथ्य को ध्यान में रखकर ऋषि दयानन्द ने स्वरचित ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका में इस तथ्य को रेखांकित किया कि प्रत्येक वेद मंत्र प्रत्यक्ष या परोक्ष रीति से ईश्वर का वर्णन करता है और अपनी इसी सुविचारित धारणा को पुष्ट करने के लिए उन्होंने वेदों में आर्य अग्नि, इन्द्र, वायु, मित्र, वरुण, विष्णु, पूषन्, बृहस्पति, मातरिखा, सुपर्ण आदि देवताओं को एक ही परमात्मा के विभिन्न नाम सिद्ध कर वैदिक एकेश्वरवाद की प्रतिष्ठापना की।

तथापि उपनिषदों के महत्त्व को भी न्यून नहीं कहा जा सकता। इन ग्रन्थों में परमात्म शक्ति, जीवात्मा तथा सृष्टि प्रपञ्च की जैसी मनोज्ञ, आह्लादकारी तथा सटीक व्याख्या की गई है वैसी संसार के किसी अन्य साहित्य में दुर्लभ है। ईशोपनिषद् के नाम से प्रसिद्ध अठारह मन्त्रों की संक्षिप्त कृति स्वल्प परिवर्तनों के साथ यजुर्वेद का चालीसवां अध्याय ही है। यजुर्वेद के 39 अध्यायों में जहाँ मनुष्य के लिए विधायक नाना कर्मों का सविस्तार उल्लेख हुआ है वहां 40वें अध्याय की परिणति ब्रह्म ज्ञान के विवेचन में हुई है। इससे यह स्पष्ट है कि सम्पूर्ण कर्मों की परिसमाप्ति ज्ञान में ही होनी चाहिए। भारतीय मनीषा में ज्ञान को जो महत्त्व मिला है उसे गीता में बहुविध व्यक्त किया गया है –

ज्ञानाग्नि: सर्वकर्माणि भस्मसातकुरुते तथा, न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते, ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्तिमचिरेणाधिगच्छति आदि उक्तियाँ इसी तथ्य को प्रकट करती हैं।

केन से लेकर श्वेताम्बर पर्यन्त 10 उपनिषदों में भी नाना शैलियों, रूपकों, वर्णन पद्धतियों, उपाख्यानों तथा उक्ति चातुर्य के साथ ब्रह्म तत्त्व की विवेचना की गई है। उपनिषदों की शैली भावात्मक, काव्य प्रधान तथा पाठक के अन्तस्तल को छने वाली है अत: आपातत: विचार करने वालों को उनके नाना संदर्भ परस्पर विरुद्ध तथा वदतोव्याधात दोष से दूषित प्रतीत होते हैं। किन्तु वास्तविकता ऐसी नहीं है। यदि समन्वयात्मक दृष्टि से इन ग्रन्थों का अध्ययन किया जाये तो वैचारिक संगति भी यहाँ मिलेगी। वस्तुत: यह खेद का प्रसंग रहा कि जब भारत के दार्शनिक जगत् मे नाना प्रवाद तथा मत प्रचलित हुए तो कथित वेदान्तवादी आचार्यों ने स्वनिरुपति सिद्धान्तों की पुष्टि में उपनिषद्, गीता तथा ब्रह्मसूत्र के स्वमतानुकूल भाष्य लिखे। फलत: अद्वैत, विशिष्टाद्वैत, द्वैताद्वैत, द्वैत तथा शुद्धाद्वैत आदि पक्षों को उत्तम ग्रन्थों से पुष्ट करने वाले भाष्यों से जिज्ञासु पाठकों में बुद्धिभेद पैदा हुआ जबकि भगवान कृष्ण ने विपश्चित जनों को चेतावनी दी थी कि उन्हें जन सामान्य में बुद्धिभेद पैदा करने से विलग रहना चाहिए।

यों तो उपनिषदों के नाम से प्रचलित ग्रन्थों की संख्या शताधिक है, किन्तु ईश से लेकर श्वेताश्वतर पर्यन्त एकादश उपनिषद् ही ऋषि प्रोक्त होने से प्रमाण कोटि में आते हैं। अन्य उपनिषद् शैव, शाक्त, वैष्णव, गाणपत्य, सौर आदि विभिन्न उपासक सम्प्रदायों राम, कृष्ण, शिव, सूर्य, गणेश आदि पौराणिक देवों तथा हठयोग की साधन प्रणालियों एवं भस्म, रुद्राक्ष धारण आदि परवर्ति साम्प्रदायिक कर्मों के निरुपक होने के कारण अप्रामाणिक तथा अनार्ष हैं। किसी मनचले ने इसी प्रवृत्ति का लाभ उठाते हुए एक अल्लोपनिषद् भी लिख डाला जिसकी चर्चा महर्षि दयानन्द ने की है। यों कैवल्योपनिषद् तथा महानारायणोपनिषद् में भी अनेक सुन्दर आध्यात्मिक प्रसंग आते हैं। किन्तु इनकी प्रमाणिकता द्वितीय कोटि की ही है।

इन पंक्तियों के लेखक का उपनिषदों से परिचय आधी सदी से भी अधिक पुराना है। मैंने हाई स्कूल की परीक्षा 1945 में पास की और इसी वर्ष जसवन्त कॉलेज, जोधपुर में बी. ए. प्रथम वर्ष में प्रवेश के लिए प्रार्थनापत्र दिया। आज की भांति उन दिनों स्कूल कॉलेजों में प्रवेश पाने में विशेष कठिनाई नहीं होती थीं तथापि प्रवेशार्थियों को अंग्रेजी की एक सामान्य लिखित परीक्षा में उत्तीर्ण होना पड़ता था। मैं इसमें पास तो हो गया किन्तु प्रवेश चाहने वाले छात्रों में मेरा नाम प्रतीक्षा सूची में भी चौथा था। जब तक विधिवत कॉलेज में प्रवेश न मिले, तब तक क्या करूँ, यह एक समस्या थी। यदि प्रवेश नहीं मिलेगा तो कहीं नौकरी की तलाश करनी होगी। कुछ इसी प्रकार की दुविधा मेरे सामने थी और इसी मन:स्थिति में मैंने दार्शनिक जगत् के इन मूर्धाभिषिक्त ग्रन्थों को हाथ में लिया, जो संसार के आध्यात्मिक ज्ञान के सार सर्वस्व समझे जाते हैं।

जर्मनी के प्रसिद्ध दार्शनिक शायनहार ने इनके बारे में लिखा था - "In the while world these is no study so a beneficial and so elevating as that or the upanishadh, it has been the solace of my life and it will be the solace after my death." अर्थात् संसार में उपनिषदों के अध्ययन के तुल्य लाभप्रद तथा आत्मा को उन्नत करने वाला कोई अन्य ग्रन्थ नहीं है। इनसे मुझे इस जीवन में तो शान्ति तथा प्रेरणा मिली ही है, मृत्यु के बाद भी इनकी शिक्षाएं ही मेरे लिए शान्तिदायक रहेंगी।

मैंने महात्मा नारायण स्वामी रचित उपनिषद् रहस्य (ग्रन्थमाला) को क्रमश: पढ़ना आरम्भ किया। ईश, केन, तथा कठ, इन तीन उपनिषदों का विषय विवेचन अधिक सरल लगा, प्रश्नोपनिषद् तथा ऐतरेय कुछ अधिक रहस्यावरण से ढंके प्रतीत हुए। मुण्डक का अध्ययन रोचक तथा सरल था जबकि माण्डूक्य के स्वल्पकाय ग्रन्थ का स्वारस्य जब प्रकट हुआ जब पं. गुरुदत्त विद्यार्थी की व्याख्या पढ़ी। यों गौडयादीय कारिकाओं ने इस ग्रन्थ को अधिक कठिन बनाया है। छान्दोग्य और बृहदारण्यक को पढ़ने का अवसर कुछ वर्ष बाद में मिला जब पं. शिवशंकर शर्मा काव्यातीर्थ द्वारा रचित इनके वृहद् भाष्यों का अनुशीलन किया। इन्हीं दिनों में पं. रघुनन्दन शर्मा का विख्यात ग्रन्थ वैदिक सम्पत्ति भी पढ़ा। उसमें उपनिषदों में प्रक्षेप शीर्षक प्रकरण को पढ़ने से अनेक शंकाएं भी हुई किन्तु इन ग्रन्थों के प्रति श्रद्धा तथा इनके अध्ययन में रुचि निरन्तर बढ़ती गई।

नगर आर्य समाज जोधपुर के पुस्तकालय से उपनिषदों के जो भाष्य तथा टीकाग्रन्थ मिले, उन सभी को एक-एक कर पढ़ डाला। पं. भीमसेन शर्मा, महामहोपाध्याय पं. आर्यमुनि, प्रो. राजाराम, स्वामी दर्शनानन्द, स्वामी सत्यानन्द, पं. देवेन्द्रनाथ शास्त्री, पं. गोपाल बी. ए., स्वामी ब्रह्ममुनि आदि प्राय: सभी आर्य विद्वानों द्वारा किये गये भाष्य और टीकाओं को पढ़ा। इसका एक बड़ा लाभ तो यह हुआ कि उपनिषदों के पाठ तथा अर्थ की बार-बार आवृत्ति हो जाने के कारण इनके विषय से तादातम्य हो गया। तथापि इनमें विवेचित सभी विषय इतने सहज, सरल तथा सुबोध भी नहीं है। विशेषत: छान्दोग्य और बृहदारण्यक में वर्णित अनेक विधाएं तथा वहाँ आये उपाख्यानों के कतिपय अंश विस्तृत विचार की अपेक्षा रखते हैं।

उपनिषदों के महत्त्व को बिना किसी देश-काल या सम्प्रदाय के भेद के, सभी देशों, मतों तथा सम्प्रदायों के मनीषियों ने स्वीकार किया है। मुगलवंश के अभागे राजकुमार युवराज दाराशिकोह ने जब उपनिषदों को पढ़ा तो वह इस दिव्य ज्ञान के सम्मोह में इतना बंधा कि उसने इसका फारसी, तर्जमा कर डाला और इसे श्रेष्ठ दर्शन कहा। यूरोपीय तथा अन्य पाश्चात्य दार्शनिकों ने भी उपनिषद्-ज्ञान की उत्कृष्टता को मुक्त कण्ठ से स्वीकार किया है। प्रो. आर्थर एन्थनी मैकडालन ने इनके बारे में लिखा –

उपनिषदों का दार्शनिक ज्ञान बहुत ऊँचा है। इनका प्रादुर्भाव सुकरात, प्लेटो और अरस्तू आदि यूनानी दार्शनिकों से शताब्दियों पूर्व हुआ था। इन दार्शनिकों के विचार उपनिषदों के अनुरूप हैं तथा उनसे उद्धृत किए हुए से प्रतीत होते हैं।

ब्रह्मसमाज के संस्थापक राजा राममोहन राय ने लिखा –

उस महानतम परमात्मा का परिपूर्ण ज्ञान, उपनिषदों में ही समग्र रीति से वर्णित है। इसे ही वेद और वेदान्त का सार-सर्वस्व कहना चाहिए। पं. ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने उपनिषदों के महत्त्व के बारे में लिखा है सम्पूर्ण संसार के पुस्तकालयों में उपनिषद सबसे महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ हैं। वेद तो सम्पूर्ण विद्याओं और कलाओं के भण्डार हैं जो परमात्मा ने मनुष्य के हितार्थ प्रदान किये परन्तु उपनिषद् ईश्वर के एकत्व और अध्यात्म विद्या का ही प्रतिपादन करते हैं। थियोसोफिकल सोसाइटी की अध्यक्ष श्रीमती एनी बेसेन्ट ने लिखा था - उपनिषद् सम्पूर्ण जगत के साहित्य में अद्भुत तथा अद्वितीय ग्रन्थ हैं। वे ज्योतिस्तम्भ की भांति लोगों के मार्गदर्शक हैं।

आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द ने अपने ग्रन्थों में उपनिषदों को भूरिश: उद्धत किया है। अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम संस्करण में उन्होंने अपने दार्शनिक मन्तव्यों की पुष्टि में सर्वाधिक प्रमाण उपनिषदों से ही दिये हैं। आर्य समाज में उपनिषदों को प्रारम्भ से ही आदर मिलता रहा। स्वामी दयानन्द उपनिषदों की अद्वैतवादी व्याख्या से सहमत नहीं है। वे यह स्वीकार नहीं करते कि अहं ब्रह्मस्मि, तत्त्वमसि, प्रज्ञानमानन्दं ब्रह्म तथा अयमात्मा ब्रह्म जैसे उपनिषद् वाक्य जीव और ब्रह्म के अभेद के परिचायक हैं। उन्होंने इन वाक्यों को प्रसंग से पृथक कर व्याख्या करने को अनुचित कहा है तथा इनके वास्तविक अर्थ भी लिखे हैं जिनसे अद्वैत की सिद्धि नहीं होती। स्वामी दयानन्द के परवर्ती आर्य विद्वानों ने उपनिषदों के बारे में प्रभूत साहित्य लिखा है जो टीका, भाष्य तथा समीक्षा के रूप में है। पं. आर्य मुनि का दृढ़ विश्वास था कि उपनिषदों में जो दार्शनिक मत प्रकट किया गया है, उससे शाङ्कर मत की पुष्टि नहीं होती। उनका विचार निम्न दोहे में स्पष्ट हुआ है :-

उपनिषदों में है नहीं माया मत की गंध।
आद्योपान्त विचार बिन भागत करे मतिमंद॥

- 3/5 शंकर कालोनी,
श्रीगंगानगर (राजस्थान)

पृष्ठ 1 का शेष

नव सम्वत् वर्ष 2076 व आर्य समाज स्थापना दिवस मनाया गया

जा रहा है। आज सबसे बड़ी आवश्यकता बच्चों को संस्कारित करने की है और इसीलिए इस महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम का आयोजन हम प्रतिवर्ष करते हैं। उन्होंने कहा कि भारतीय संस्कृति को जीवित रखने के लिए वेद ज्ञान को घर–घर में पहुँचाना होगा।

आगामी दिनों में

इस अवसर पर अपने विचार व्यक्त करते हुए आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान श्री अश्विनी शर्मा एडवोकेट ने कहा कि बच्चों को संस्कारित करने के लिए आर्य समाज निरन्तर कार्यक्रम आयोजित करता रहता है और इस महत्त्वपूर्ण कार्य में आर्य समाज कोई कोर–कसर नहीं छोड़ेगा। उन्होंने कहा कि बचपन से ही बच्चों में नैतिकता, बड़ों का आदर, राष्ट्रीयता आदि के संस्कार डाले जाने चाहिए।

मुख्यअतिथि के रूप में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के यशस्वी प्रधान स्वामी आर्यवेश जी ने अपने ओजस्वी वक्तव्य में सभा को सम्बोधित करते हुए कहा कि आज देश में नैतिक पतन अपने चरम पर है। युवावर्ग जो कल का भविष्य है उसको कोई रास्ता परिलक्षित नहीं हो रहा है। वह पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित होकर व्यसनों में आकंठ डूब रहा है। उन्होंने कहा कि यह स्थिति न तो समाज के लिए और न ही राष्ट्र के लिए अच्छी है। स्वामी जी ने कहा कि युवा देश की शक्ति है और उसे संस्कारित करना माता–पिता के बाद आर्य समाज का ही उत्तरदायित्व है। आज इस कार्य के लिए न तो कोई संस्था और न ही कोई राजनैतिक दल गम्भीर है। देश में भ्रष्टाचार, बेईमानी, अपराध, नशाखोरी तथा असामाजिकता फैल रही है और उसके पीछे सबसे बड़ा कारण बच्चों का संस्कारवान न होना ही है। स्वामी जी ने कहा कि इस विषय पर सबसे ज्यादा आर्य समाज ही चिन्तित है और इस दिशा में निरन्तर प्रयासरत है। उन्होंने कहा कि हमारे यहाँ 16 संस्कारों का विधान है। इन संस्कारों के माध्यम से जीवन में पवित्रता और सजग चेतना का विकास किया जाता है। आज इन संस्कारों को हम निरन्तर भूलते जा रहे है। स्वामी जी ने कहा कि वैदिक संस्कृति पूरे समाज के प्रति दृष्टिकोण को दर्शाती है। वैदिक संस्कृति का मूल 'वसुधैव कुटुम्बकम्' है। आर्य समाज ने अपना मुख्य नियम बनाया है कि संसार का उपकार करना ही इस समाज का मुख्य उद्देश्य है और आगे कहा कि प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में संतुष्ट न रहना चाहिए किन्तु सबकी उन्नती में अपनी उन्नति समझनी चाहिए। हम इन उदात्त भावनाओं को अपने जीवन में धारण करते हैं और इसी का प्रचार करते हैं। उन्होंने कहा कि श्रेष्ठ व्यक्ति वह होता है जो दूसरों के आंसू पोंछने के लिए सदैव तैयार रहता है और यह गुण तभी आता है जब हम संस्कारवान हों। स्वामी जी ने कहा कि आज इस नये वर्ष में आवश्यकता इस बात की है कि दूसरों के दुःखों को अनुभव करने और उनके दुःख दूर करने का हम संकल्प लें। स्वामी जी ने श्री ओम प्रकाश आर्य जी का विशेष साधुवाद किया और कहा कि यह महत्त्वपूर्ण आयोजन करके वे वैदिक संस्कृति को बचाने का कार्य कर रहे हैं। समाज के संगठन के द्वारा व्यक्ति की निजी शक्ति एवं योग्यता, क्षमता कई गुना बढ़ जाती है तथा आर्य समाज के माध्यम से हम अपनी संस्कृति, साहित्य और वह सब कुछ जिस पर हम गर्व कर सकते हैं उसको स्थिर रख सकते हैं। उसकी अभिवृद्धि एवं उसका उन्नयन कर सकते हैं तथा आगामी पीढ़ी के लिए विरासत में उसे छोड़ सकते हैं। श्री ओम प्रकाश आर्य जी ऐसा ही कर रहे हैं। स्वामी जी ने कहा कि संस्कारशीलता की रक्षा के लिए हम अन्य सामाजिक संगठनों से भी अपील करते हैं कि वे सब एक मंच पर एकत्रित हों और इस महत्त्वपूर्ण कार्य में सहयोग प्रदान करें।

समारोह में श्री सोमदत्त शास्त्री, स्थानीय विधायक श्री इन्द्रवीर सिंह बुलारिया आदि ने भी अपने विचारों से श्रोताओं को लाभान्वित किया।

इससे पूर्व ऋषि दयानन्द जी के जीवन से सम्बन्धित भजनों को सुलोचना आर्या, राकेश आर्या, भारती, हितेश गुलशन गुरदासपुर, मीना पसाहन, सुनीता आर्या, छवि गुप्ता आदि ने गाकर कार्यक्रम में उपस्थित जन समूह को मन्त्र मुग्ध कर दिया। इस विशेष आयोजन में पंजाब के कोने–कोने से पहुंचकर लोगों ने कार्यक्रम को सफल बनाया।

इस अवसर पर श्री ओम प्रकाश आर्य ने सामाजिक बुराईयों के उन्मूलन तथा बच्चों को संस्कारित करने के उद्देश्य से टेलीविजन पर 'संस्कार मिशन' के नाम से एक कार्यक्रम प्रारम्भ करने की भी घोषणा की। जिसका हर्ष ध्वनि से स्वागत किया गया। सम्पूर्ण कार्यक्रम का मंच संचालन डॉ. नवीन आर्य ने अत्यन्त कुशलता के साथ संभाला।

इस कार्यक्रम में विभिन्न आर्य समाजों के प्रधान, मंत्री उपस्थित हुए। जिनमें श्री इन्द्रपाल आर्य प्रधान आर्य समाज लक्ष्मणसर, श्री नरेश अग्रवाल प्रधान आर्य समाज तरन तारन, सरदार अमन प्रीत सिंह, डायरेक्टर दशमेश इंजीनियरिंग वर्क्स, श्री जुगल महाजन बसपा नेता, श्री इन्द्रजीत आर्य प्रधान आर्य समाज पुतलीघर, श्री स्वतंत्र कुमार मंत्री आर्य समाज जंडियाला गुरु, श्री कमल पसाहन प्रधान आर्य समाज जंडियाला गुरु, श्री महेन्द्र पाल विज लुधियाना, श्री तरूण कपूर प्रधान पट्टी, श्री सतदेव महाजन उपप्रधान पुतलीघर, श्री पदम प्रकाश मेहरा आर्य समाज शक्तिनगर, श्री यशपाल महाजन, श्रीमती मधुर भाषिणी आर्या दीनानगर, श्री जितेन्द्र त्रेहन, श्री गौरव सरीन एडवोकेट नवांशहर, श्री परमजीत एडवोकेट जालन्धर आदि अनेक समाजों से भारी संख्या में आर्यजनों ने उपस्थित होकर 'आर्य गौरव दिवस' के कार्यक्रम को सफल बनाया। सभी मुख्य मेहमानों को शॉल व ऋषि पुस्तक स्मृति चिन्ह के रूप में देकर सम्मानित किया गया।

आयोजन को सफल बनाने में सर्वश्री राज कुमार, अर्जुन कुमार, कर्ण पसाहन, अशोक वर्मा, सुधीर गुप्ता, सुलोचना आर्या, पंकज वर्मा, विनोद मदान, ऋषि आर्या, खुशी आर्या, गौरव हान्डा, आर्यमन, डॉ. अंजू आर्या, कमलेश रानी, सुनील पसाहन, नम्रता, कोमल, कुणाल पसाहन, विजय अरोड़ा, ईशान वर्मा, गौरव आर्य, विपिन अग्रवाल, राजेश हाण्डा आदि ने अथक प्रयत्न कर कार्यक्रम को सफल बनाने में सहयोग प्रदान किया। वैदिक विद्वान आचार्य दयानन्द शास्त्री ने सम्पूर्ण कार्यक्रम की व्यवस्था एवं संयोजन में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। शांति पाठ के पश्चात् सभा विसर्जित की गई। इस अवसर पर सुन्दर जलपान की व्यवस्था की गई थी जिसमें सभी ने अत्यन्त आनन्दपूर्वक भाग लिया।

आर्य समाज स्थापना दिवस एवं नवरात्र पर महिलाओं को वितरित किये गये पौधे

आर्य समाज छपरौली की ओर से नवसंवत्सर, नवरात्र व आर्य समाज स्थापना दिवस के अवसर पर द्वितीय वार्षिक यज्ञ का आयोजन मोनिका आर्या के आवास पर किया गया।

आर्य समाज के कोषाध्यक्ष नरेन्द्र आर्य ने बताया कि इस यज्ञ में प्रत्येक वर्ष बेटी बचाओ अभियान से जुड़ी महिलाओं का पूर्ण सहयोग रहता है। यज्ञ के पश्चात् बेटी बचाओ अभियान की राष्ट्रीय अध्यक्ष बहन पूनम आर्या ने आज के दौर में बेटियों की दशा पर चिन्ता जताई और महिलाओं को बेटियों के प्रति अपनी व परिवारजनों की सोच को बदलने का आह्वान किया। इसके पश्चात् जल एवं पर्यावरण संरक्षण दल के चेयरमैन श्री सुरेन्द्र सिंह तुगाना ने महिलाओं को पौधे भेंट किये और प्रत्येक पुनीत अवसर पर पौधारोपण करने का संकल्प दिलाया। इस अवसर पर बेटी बचाओ अभियान की राष्ट्रीय संयोजक बहन प्रवेश आर्या, श्यामवती, संतरेश, राजबीरी, ओमकारी, रीतू आर्या, अदिति आर्या, श्री धर्मेन्द्र आर्य व संजीव आर्य आदि उपस्थित थे।

सोम का न्याय

– स्वामी विवेकानन्द सरस्वती

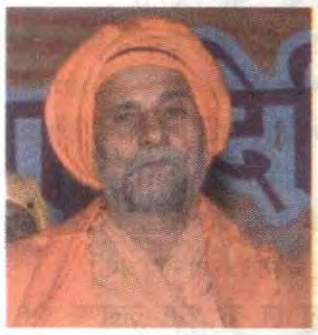

वेदों, शास्त्रों, स्मृतियों, इतिहासों, आख्यानों, उपाख्यानों, कथाओं तथा अन्य संस्कृत साहित्यों का अवधानपूर्वक आलोडन–विलोडन तथा परिशीलन करने के पश्चात् यही निष्कर्ष निकलता है कि जिस व्यवहार से सत्य की रक्षा एवं असत्य का पराभव हो, उसे न्याय कहते हैं। इसी तथ्य को न्यायदर्शन के सुप्रसिद्ध भाष्यकार वात्सायन ने 'प्रमाणैरर्थपरीक्षणं न्यायः' इस प्रकार परिभाषित किया है। प्रमाण के द्वारा किसी तत्त्व का यथार्थ निरूपण, परीक्षण करना न्याय है। अब यहाँ प्रश्न उपस्थित होता है कि यदि प्रमाण इतना विश्वसनीय एवं व्यापक परिमापक है तो पहले यही देखना चाहिए कि प्रमाण क्या वस्तु है? इस विषय में महर्षि गौतम स्वयं अपने न्यायशास्त्र में कहते हैं कि 'प्रत्यक्षानुमानोपमानशब्दाः प्रमाणानि' – (न्याय. 1/1/3)

प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान तथा शब्द ये चार प्रमाण हैं। जिनके द्वारा किसी ज्ञातव्य तत्त्व का परीक्षण परि सर्वतो भाव, ईशन अवलोकन किया जाता है। महर्षि पतंजलि ने भी योगदर्शन में अनुमान के अन्तर्गत ही उपमान का समावेश करते हुए 'प्रत्यक्षानुमानागमाः प्रमाणानि' – (योग 1/7) कहकर तीन प्रमाणों का ही उल्लेख किया है। अस्तु! जो भी हो प्रमाण तीन हों या चार, इतना तो निश्चित है कि प्रमाणों का मुख्य उद्देश्य तत्त्वों का यथार्थ ज्ञान कराना है। इस तत्त्व ज्ञान की अभिलाषा रखने वाले व्यक्ति के निकट दो पक्ष उपस्थित होते हैं। एक 'सत्' तथा दूसरा 'असत्'। इन दोनों में से कौन सा उचित है, इसका निश्चय करने के लिए वह सोम (विद्वान्, राजा या न्यायाधीश) के पास उपस्थित होता है। उस समय सोम दोनों ही पक्षों का सम्यक् परीक्षण करके 'सत्' की रक्षा करता है तथा 'असत्' को मार देता है। ऋग्वेद का यह मंत्र इसी भाव को अभिव्यक्त करता है –

सुविज्ञानं चिकितुषे जनाय सच्चासच्च वचसी पस्पृधाते।
तयोर्यत्सत्यं यतरदृजीयस्तदित्सोमोऽवति हन्त्यासत्।। – ऋ. 7/104/12

अर्थात् अच्छी प्रकार ज्ञान की तह तक पहुँचे हुए मनुष्य के सामने सत् और असत् दोनों प्रकार के वचन अपना विवाद उपस्थित करते हैं। उनमें से जो सत्य है और यदि दोनों सत्य हैं तो सत्यतर है, सोम उसकी तो रक्षा करता है और असत् को मार गिराता है।

वेद के इस मंत्र में न्याय के चाहे जितने ही अर्थ क्यों न होते हों, उन सबका समावेश कर दिया है। इस सत् की रक्षा और असत् के हनन करने वाले व्यक्ति को न्यायकारी कहा जाता है।

इतिहास में भारत में ही नहीं, अपितु अन्य देशों में भी इस प्रकार के न्यायकारी राजा हुए हैं। इंदौर की महारानी अहिल्याबाई का न्याय प्रसिद्ध है। वह यह कि विधवा महारानी अहिल्याबाई के इकलौते पुत्र ने कुछ ऐसा अपराध कर दिया, जिस अपराध में सामान्य प्रजा को मृत्यु दण्ड दिया जाता था। उस अपराध से युक्त उनका पुत्र जब उनके सम्मुख न्यायार्थ उपस्थित किया गया तो महारानी ने उसके लिए मृत्युदण्ड घोषित कर दिया। मन्त्रियों ने बहुत अनुनय–विनय किया कि राजमाता इस प्रकार के दण्ड से कुल का दीपक बुझ जायेगा। तब राजमाता ने गम्भीर वाणी में कहा – 'कुल का दीपक चाहे बुझ जाए, लेकिन न्याय का दीपक नहीं बुझना चाहिए।' लगभग इसी प्रकार की घटना अरब के खलीफा उमर के साथ भी घटी थी। उनके भी इकलौते पुत्र ने कुछ इसी प्रकार का असदाचरण किया, जिसमें सामान्य प्रजा के अपराधी को सौ कोड़े मारे जाने का दण्ड था। खलीफा उमर ने अपने पुत्र को भी सौ कोड़े मारने का दण्ड दिया।

दण्ड सुनाने के बाद मंत्रियों ने कहा कि बालक कोमल है, दण्ड में न्यूनता की जाए। खलीफा ने लगभग गरजते हुए कहा कि न्याय की तुला जो कहती है, वही होना चाहिए और उनके पुत्र के साथ वही किया गया। कुछ कोड़ों के लगने के पश्चात् पुत्र का देहान्त हो गया। कोड़े लगाने वालों ने कहा कि कोड़ों की संख्या पूर्ण होने से पहले ही कुमार का देहान्त हो गया तो खलीफा ने पुनः दृढ़ता से कहा कि बचे हुए कोड़े उसकी लाश को लगाए जाएँ और ऐसा ही किया गया। इंग्लैण्ड के चतुर्थ हेनरी के युवराज के अभद्र व्यवहार करने पर न्यायाधीश ने युवराज को दण्डित किया। जब इसका समाचार चतुर्थ हेनरी को मिला तो उन्होंने सगर्व कहा कि जिस देश में इस प्रकार के न्यायाधीश हों, वह देश धन्य है।

भारत में तो सम्राट् विक्रमादित्य का न्याय विश्वविश्रुत है। उनकी 'सिंहासन बत्तीसी' की कथा आज भी लोक में चर्चित है। न्याय कैसा हो, इसके प्रतीक के रूप में तुला (तराजू) का चित्र बनाते हैं, जिसका स्पष्ट अर्थ होता है कि न्यायकर्ता की न्यायप्रणाली तुला के डण्डे के समान सीधी होनी चाहिए। चाहे उसमें सोना, चांदी या मिट्टी ही क्यों न तोली जाए। इसी भाव को महाकवि भारवि ने इन शब्दों में व्यक्त किया है –

गुरुपदिष्टेन रिपौ सुतेऽपि वा निहन्ति दण्डेन स धर्मविप्लवम्। – किरात. 1/13

शत्रु या अपना पुत्र कोई भी यदि अधर्माचरण करता है तो निष्पक्ष होकर या तटस्थ होकर उस धर्मविप्लवकारी को दण्डित करना चाहिए।

न्याय के साथ व्यवस्था शब्द सम्बन्धित है। यह व्यवस्था शब्द ही न्याय के फल को प्रकट करता है। इसमें वि+अव+स्था ये तीन शब्द हैं, जिसका सीधा अर्थ है कि कोई भी स्थिति पूर्ण उसी समय मानी जाती है जब वह व्यवस्थित हो। जहाँ न्याय होगा, वहाँ व्यवस्था होगी ही, क्योंकि अन्याय होने पर व्यवस्था तो क्या अव्यवस्था भी नहीं रहती, वहाँ तो होती है भयंकर दुर्व्यवस्था। जिस प्रकार सूर्य के प्रकाश में अन्धकार नहीं रह सकता, उसी प्रकार न्यायरूपी सूर्य की उपस्थिति में अव्यवस्थारूपी अन्धकार नहीं रह सकता।

वेद में न्याय संस्थापन के लिए असत् को मारना अत्यावश्यक बताया है। इसीलिए तो कहा है कि –

सुविज्ञानंचिकितुषे ..... सोमोऽवति हन्त्यांसत्।। – ऋ. 7/104/12

इस प्रकरण में इससे पूर्व के मंत्र में भी इसी प्रकार का भाव अभिव्यक्त किया है –

ये पाकशंसं विहरन्त एवैर्ये वा भद्रं दूषयन्ति स्वधाभिः।
अहये वा तान्प्रददातु सोम आ वा दधातु निर्ऋतेरुपस्थे।। – ऋ. 7/104/9

पदार्थ (ये) जो लोग (एवैः) बुरे अभिप्रायों से (पाकशंसम्) परिपक्व, सत्यवचन कहने वाले को (विहरन्ते) विरुद्ध मार्ग में ले जाते हैं (वा) अथवा जो (स्वधाभिः) अपने बल, अन्न, गृह के बल से वा वेतनभोगी पुरुषों द्वारा (भद्रं दूषयन्ति) भले आदमी को दूषित करते हैं। (सोमः) शासक, राजा, न्यायाधीश (तान्) उनको (वा) भी (अहये प्रददातु) सर्पादि जन्तु के काटने वा सर्पवत् कुटिलाचार करने के लिए दण्ड दे। (वा) अथवा (तान्) ऐसे पुरुषों को (निःऋते) दुःखदायी जन्तु सिंह, रीछ आदि वा पीड़क के (उपस्थे) समीप (आदधातु) रक्खे।

इसी सूक्त के 13वें मंत्र में भी सोम को न्याय करने की ही प्रेरणा दी गई है –

न वा उ सोमो वृजिनं हिनोति न क्षत्रियं मिथुया धारयन्तम्।
हन्ति रक्षो हन्त्यासद्वदन्तमुभाविन्द्रस्य प्रसितौ शयाते।। – ऋ. 7/104/13

पदार्थ – (सोमः) उत्तम शासक (वृजिनम्) असत्य को (न वै उ हिनोति) कभी वृद्धि न होने दे और (मिथुया धारयन्तम्) असत्य के धारक (क्षत्रिययम्) बलशाली पुरुष को भी (न हिनोति) न बढ़ने दे। (रक्षः) दुष्ट पुरुष को (हन्ति) दण्ड दे और (असद् वदन्तं हन्ति) असत्यवादी को दण्ड दे। (उभौ) वे दोनों भी (इन्द्रस्य प्रसितौ) दुष्टों के भयकारी पुरुष के उत्तम बन्धन में (शयाते) डाले जाएँ।

वेद में सोम के इस प्रकार के न्याय करने के मिष से शासकों प्रशासकों एवं न्यायाधीशों के लिए न्याय करने का मार्ग निर्दिष्ट किया है। यद्यपि लोक में अन्य भी घटनाएँ न्यायपद वाच्य होती हैं, किन्तु वहाँ न्याय शब्द प्रायः प्रकारार्थवाची होता है। जैसे – घुणाक्षर न्याय, काकतालीय न्याय, ब्राह्मणवशिष्ठ न्याय, मत्स्य न्याय, आरण्यक न्याय, अविरविक न्याय, सीलीपुलाक न्याय, गजनिमीलक न्याय, खलकपोत न्याय, तक्रकौण्डिन्य न्याय, अर्धजरती न्याय, देहलीदीप न्याय, जलतुम्बिका न्याय, अन्धपंडु न्याय, गोवलीवर्द न्याय, दग्धरथाश्व न्याय, अशोकवाटिका न्याय इत्यादि। इनमें से अनेक न्यायों के माध्यम से शास्त्रीय विषयों का समाधान कर शास्त्रीयव्यवस्था स्थापित की जाती है। महर्षि पतंजलि ने तो व्याकरण महाभाष्य में अनेकत्र इनका प्रयोग कर पुचुर मात्रा में शब्द साधुत्व दर्शाया है तथा आचार्य पाणिनि के सूत्रों का औचित्य भी।

' न हाव्यवस्थाकारिणा शास्त्रेण भवतिव्यम्। शास्त्रेण नाम व्यवस्थाकारिणा भवितव्यम्'। – व्याकरणमहाभाष्य – 3/1/11

यहाँ मत्स्यन्याय, आरकण्यकन्याय आदि में न्याय शब्द कहा तो जाता है, किन्तु वक्ता का अभिप्राय केवल यही होता है कि वहाँ 'सद्' और 'असद्' का विचार करके निर्णय नहीं किया जाता, अपितु बलवान् जो चाहता है, वही कर लेता है। यह निन्द्य न्याय है, क्योंकि इस न्याय शब्द के साथ व्यवस्था नहीं है या जो व्यवस्था है, उसे हम व्यवस्था नहीं कह सकते, तथापि इन कथनों से न्यायभास अन्याय पर प्रकाश तो पड़ता ही है। व्यवस्था तो न्याय का फल या सार होती है और यहाँ यह व्यवस्था दिखाई नहीं देती।

– गुरुकुल प्रभात आश्रम, भोलाझाल, मेरठ

पृष्ठ 2 का शेष

श्री राम का बहुआयामी व्यक्तित्व

को अनेक शिक्षाएं देती है।

8. सन्देह बुरी बलाः- चित्रकूट में भरत अपने अग्रज राम से मिलने आ रहे थे। किन्तु लक्ष्मण को सन्देह हो गया और वे भरत पर कुपित हो गए। उन्होंने राम को अपना सन्देह कहा। राम ने उन्हें धैर्य बंधाते हुए विवेक से काम लेने की बात समझाई। उन्होंने कहा- भरत कृतघ्न नहीं हो सकता। वह हमारा भाई है। तुम उसके साथ कुछ अनिष्ट मत कर बैठना। लक्ष्मण पहले तो माने नहीं परन्तु, अन्त में चुप हो गए। राम भरत का यह मिलन संसार के इतिहास में अपना विशेष स्थान रखता है। यह घटना आज भी प्रेरणादायी है।

9. हताश सुग्रीव को जीवनदानः- बेचारा सुग्रीव हर दृष्टि से निराश बैठा था। पत्नी गई, राज्य गया और जीवन भी खतरे में पड़ गया। पत्नी हरण की पीड़ा का अनुभव राम को भी था। दोनों एक ही नाव के सवार थे। उन्होंने उसे नीति का वचन कहा- "अनुज सुता, भगिनी, सुतनारी इन्हें विलोक पातकभारी" और उसे धैर्य बंधाते हुए कहा- ऐसे पतित को मारने में पाप नहीं अपितु धर्म है। बालि ने भी मरते समय एक व्यंग्य कसा था- "मैं बैरी सुग्रीव पियारा, कारण कौन नाथ मोहि मारा" अरे राम। मैने तो तुम्हारी कोई हानि नहीं की थी। मैं समय पर तुम्हारी सहायता कर सकता था किन्तु अब मैं तुम्हारे मारने पर अपने आपको भाग्यशाली समझता हूँ।

10. नारी स्मिता का रक्षक जटायुः- वनवासी जटायु के जीवन का एक ध्येय मंत्र था जीवित रहते किसी की बहु बेटी का अपमान न होने दूंगा। बलवान दुष्ट से कभी न डरना, चाहे प्राण भले ही जाये। जटायु ने यह चरितार्थ कर दिखाया। राम ने भी कृतज्ञता के साथ उसकी आदर सहित अन्त्येष्टि कर दी।

11. विभीषण को राज तिलकः- भारतीय संस्कृति कभी भी विस्तारवादी और साम्राज्यवादी नहीं रही। राम ने रावण की मृत्यु के पश्चात उसके अनुज विषीषण को लंका का राज्य सौंप दिया। योगिराज श्रीकृष्ण चन्द्र ने भी अनेक अत्याचारी राजाओं को मारकर उनके पिता या पुत्रों को राज्य सौंप दिया। किन्तु वे स्वयं राजा नहीं बने।

12. हनुमान के प्रति अखण्ड प्रेमः- हनुमान जी आदर्श सेवक, त्यागी और सहिष्णु थे। राम ने भी अपने अन्तिम समय तक हनुमान को अपने सानिध्य में रखा। इससे हनुमान आज भी आदर्श महापुरुष माने जाते हैं। इस प्रकार पारिवारिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय जीवन में मर्यादा पुरुषोत्तम राम का पवित्र जीवन आज भी प्रासंगिक है। आज राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक को उनके जीवन के सद्गुणों को धारण करने की बड़ी आवश्यकता है। यही कारण है कि महात्मा गांधी 'राम' के अनन्य भक्त और रामराज्य स्थापित करने के लिए प्रयत्नरत थे। उनके मुख से अन्त में हे राम! ही निकला था। हे राम! हे राम! हे राम!!!

- सुकिरण अ/13, सुदामानगर,
इन्दौर-452009(म.प्र.)

श्री राम बन जाओ तुम

– पं. नन्दलाल निर्भय सिद्धान्ताचार्य

श्री राम की महिमा गाओ सकल जगत के नर–नारी।
वैदिक मर्यादा पुरुषोत्तम, श्री राम थे न्यायकारी।।
माता–पिता, गुरु, वृद्धों की, सेवा रघुवर करते थे।
दुखिया दीन अनाथ जनों की पीड़ाएं वे हरते थे।।
चरित्रहीन अन्यायी पापी, श्रीराम से डरते थे।
वीर व्रतधारी रघुनन्दन, जग में निडर विचरते थे।।
प्रजा पालक धर्म धुरन्धर, दयावान थे तपधारी।
वैदिक मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम थे न्यायकारी।
बाली, रावण के जुल्मों से, दुखी विश्व यह सारा था।
ऋषियों–मुनियों विद्वानों का जग में नहीं सहारा था।।
त्रिसरा अरु मारीच, सुबाहू, करते ये खल मनमानी।
विश्वामित्र, अगस्त्य, अत्रीय, व्याकुल थे ज्ञानी–ध्यानी।।
श्री राम ने धर्म समझकर, मारे थे अत्याचारी।
वैदिक मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम थे न्यायकारी।
रघुकुल भूषण श्री राम जी, अगर न भारत में आते।
नर्कधाम जग बन जाता, सब ईश्वर भक्त कष्ट पाते।।
ईश्वर भक्त सज्जनों से था, श्रीराम का प्यार सुनों।
धर्म–कर्म का, पुण्य दान का, उनको रहा विचार सुनों।।
निषाद राज निर्धन खेवट से, श्रीराम की थी यारी।
वैदिक मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम थे न्यायकारी।
उद्धार अहिल्या देवी का, था श्री राम ने किया सुनों।
सुग्रीव, विभीषण से दुखियों को, राम ने अपना लिया सुनों।।
विघ्न और बाधाओं से वे, कभी नहीं घबराते थे।
मानवता के हत्यारों से, वे निर्भय अड़ जाते थे।।
इसीलिए श्रीराम की महिमा, गाती है दुनियां सारी।
वैदिक मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम थे न्यायकारी।
उग्रवाद, आतंकवाद, दिन पर दिन बढ़ता जाता है।
दानव दल हुंकार रहा है, नजर दुखी जग आता है।।
आपा–धापी मची हुई है, धर्म कर्म सब भूल गए।
नर–नारी बन गए स्वार्थी, झूठे मद में फूल गए।।
छुआ–छूत की ऊँच–नीच की, पनप गई अब बीमारी।
वैदिक मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम थे न्यायकारी।
श्री राम के पुत्र–पुत्रियों! जागो धनुष उठाओ तुम।
मानवता के हत्यारों का, जग से नाम मिटाओ तुम।।
तरुणाई का जोश दिखाओ, श्री राम बन जाओ तुम।
दुर्गुण त्यागो, सद्गुण धारो, जग को स्वर्ग बनाओ तुम।।
"नन्दलाल" थी श्री राम को, प्राणों से प्रजा प्यारी।
वैदिक मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम थे न्यायकारी।

- आर्य सदन बहीन जनपद-पलवल (हरियाणा),
दूरभाष:-9813845774

13 अप्रैल पर विशेष

अमृतसर की खूनी बैसाखी से क्षुब्ध हुए

अमर शहीदों का बलिदान

– रामबिहारी विश्वकर्मा

अंग्रेज हमारे देश में व्यापारी के रूप में आये और भारत की जनता ने 'अतिथि देवो भव' की परम्परा के अनुसार इन व्यापारियों को सब प्रकार की सुविधाएं दीं। लेकिन धीरे-धीरे इन व्यापारियों ने देश में फूट डालकर उसके टुकड़े-टुकड़े करके अपना कब्जा जमा लिया। 1857 में भारतीय सिपाहियों ने पहली बार विद्रोह करके भारत माँ को विदेशी दासता से मुक्ति दिलाने का प्रयास किया लेकिन वे विफल रहे। महाराष्ट्र में वासुदेव बलवन्त फड़के ने 1873 में युवा समाज का संगठन शुरू किया। जगह-जगह व्यायामशालाएं खोलीं। इस क्रान्तिकारी को राजद्रोह के आरोप में आजीवन कारावास की सजा दी गई लेकिन युवकों ने खासतौर पर गरमपंथी विचारधारा वाले युवकों ने यह निश्चय कर लिया कि इस देश को आजादी भीख मांगने से नहीं मिलेगी। उनका दृढ़ विचार था कि स्वतंत्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है और उसे हम लेकर रहेंगे।

भारत में अंग्रेजों ने तथाकथित शासन सुधार लाने के लिए लार्ड साइमन की अध्यक्षता में एक कमीशन नियुक्त किया था। यह कमीशन 3 फरवरी, 1928 को जब भारत पहुंचा तो पूरे देश में हड़ताल रखी गई। और जगह-जगह ''साईमन गो बैक'' के नारे लगाये गये। लाहौर में नौजवान भारत सभा के सदस्यों ने भी नारे लगाने की योजना बनाई। तत्कालीन पुलिस अधीक्षक स्काट ने असिस्टेंट सान्डर्स को रास्ता साफ करने की जिम्मेदारी सौंपी। लाहौर में लाला लाजपतराय और नौजवानों की टोली पर सान्डर्स ने लाठी बरसायी। लाला लाजपतराय को इतनी चोट लगी कि कुछ दिनों पश्चात् चोट के कारण उनकी मृत्यु हो गई। भगतसिंह ने इस दुखद घटना पर प्रस्ताव रखा कि लाला जी पर जो लाठियां बरसाई गयी हैं। उसी के कारण उनकी मृत्यु हुई है। इससे समूचे राष्ट्र का अपमान हुआ है। और नौजवान भारत सभा इस अपमान का बदला लेकर रहेगी। उन्होंने लाठी चलाने वाले पुलिस सुपरिटेंडेंट स्काट को गोली का निशाना बनाने का निश्चय किया। लाला लाजपतराय की मृत्यु के एक महीने के बाद चन्द्रशेखर आजाद, भगत सिंह, राजगुरू और जयगोपाल ने पुलिस स्टेशन के सामने सान्डर्स को गोलियों से भून डाला। वे मारना तो चाहते थे स्काट को जिसने सान्डर्स को लाठी चार्ज का आदेश दिया था। लेकिन दोनों का आकार-प्रकार ऐसा था कि पहचानने में कुछ भूल हो गई और भ्रमवश उन्होंने सान्डर्स को मार डाला। इस तरह उन्होंने लाला लाजपतराय की मृत्यु का बदला ले लिया। इन जवानों ने भारत माँ की बेड़ियां काटने के लिए अपने पैरों में बेड़ियाँ डाल लीं।

23 वर्ष की उम्र में भगत सिंह एक युगपुरुष बन गये थे। अपने खून से उन्होंने स्वतन्त्रता के जिस पौध कोसींचा वह विशाल वृक्ष बन गया। भगत सिंह को वीरता का यह सबक पुश्तैनी तौर पर प्राप्त हुआ था। एक बार जब वे छोटे थे और छोटे-छोटे तिनके जमीन में गाड़ रहे थे तो उनके पिता सरदार किशन सिंह ने पूछा कि बेटे तुम क्या कर रहे हो तो तुतलाती आवाज में भगत सिंह ने कहा कि बुबुकें बो रहा हूँ। यानि बंदूके बो रहा हूँ। उनका परिवार पिछली दो पीढ़ियों से विदेशी सरकार के खिलाफ संघर्ष कर रहा था। ऐसे परिवार में भगतसिंह जैसे क्रान्तिकारी विचारों वाले बालक का जन्म लेना स्वाभाविक ही था। भगत सिंह 10-11 साल की उम्र में ही बहुत ही चिन्तनशील हो गये थे। वह धर्म के गहन विषयों की आलोचना करने में सक्षम हो गये थे। 1919 में 13 अप्रैल को बैसाखी के दिन अमृसर क जलियांवाला बाग में एक सभा में करीब 20 हजार स्त्री-पुरुष, बच्चे इकट्ठे हुए थे। इसी बीच लैफ्टिनेंट सर ओडायर ने 100 हिन्दुस्तानी और 40 अंग्रेज सिपाहियों के साथ वहां प्रवेश किया। करीब 16 सौ राउण्ड फायर किये गये, जलियांवाला बाग में लाशें पट गईं। उस समय भगतसिंह 12 वर्ष के थे। वह पढ़ने गये थे, लेकिन वह दृश्य देखकर उन्होंने खून से भीगी मिट्टी उठाई और माथे से लगाकर उसे एक छोटी सी शीशी में भर लिया। घर पहुंचने पर अपनीं बहन को वह शीशी दिखाई और शीशी के चारों ओर फूल रखकर सिर झुकाया। 14 वर्ष की उम्र में ही उन्होंने पढ़ाई छोड़ दी और स्वतंत्रता के आन्दोलन में कूद पड़े। उनके अन्दर अद्भुत संगठन शक्ति तो थी ही, व्यवहार कुशल भीथे। इसी बीच 5 फरवरी 1922 को गोरखपुर के चौरी चौरा स्थान पर लोगों की भीड़ ने थानेदार और सिपाहियों को थाने में बन्द करके आग लगा दी। क्रान्तिकारियों के मन में यह निश्चय हो गया कि अंग्रेजों के कान बहरे हो चुके हैं। वे शान्ति की भाषा सुन नहीं पाते। बहरों को सुनाने के लिए ऊची आवाज की जरूरत होती है इसीलिए उन्होंने अंग्रेजों का ध्यान आकर्षित करने के लिए और उनके बहरे कानों में सुनाई देने लायक आवाज बुलन्द करने का निश्चय किया। उन्होंने एसेम्बली में बम फेंकने की योजना बनाई। एसेम्बली में 8 अप्रैल 1929 को वायसराय के फैसले की घोषणा की जाने वाली थी। भगतसिंह और बटूकेश्वर दत्त खाकी कमीज और नेकर पहनकर वहां पहुंच गये। उन्होंने अखबार में लिपटा हुआ बम सरकारी बेंचों के पीछे खाली जगह पर फेंक दिया। उसके बाद दूसरा बम भी फेंका। उन्होंने पिस्तौल से दो गोलियां भी छोड़ी। दोनों वहां खड़े रहे और नारा लगाया इन्कलाब जिन्दाबाद दूसरा नारा गूंजा साम्राज्यवाद का नाश हो। उन्होंने एसेम्बली में पर्चे भी फेंके जिस पर अंग्रेजी में लिखा हुआ था, बहरों को सुनाने के लिए ऊँची आवाज की जरूरत होती है। बम फेंकने के बाद भगत सिंह तथा बटूकेश्वर दत्त आसानी से भाग कर बच सकते थे मगर वे शांत चुपचाप खड़े रहे। पुलिस जब उन्हें कोतवाली ले जाने लगी तो उन्होंने फिर नारा लगाया, 'इन्कलाब जिन्दाबाद' दूसरा नारा गूंजा 'साम्राज्यवाद का नाश हो।' भगत सिंह केवल क्रान्तिकारी ही नहीं थे वे अध्ययनशील और दार्शनिक विचारों वाले व्यक्ति थे। उनसे जब न्यायालय में पूछा गया कि क्रान्ति से आपका आशय क्या है तो उन्होंने कहा, क्रान्ति से हमारा प्रयोजन है अन्याय पर आधारित वर्तमान व्यवस्था में परिवर्तन। उन्होंने आगे कहा, पूंजीपति, शोषक और समाज पर घुन की तरह जीने वाले लोग करोड़ों रुपया पानी की तरह बहाते हैं। वहीं दूसरी ओर शानदार महलों का निर्माण करने वाले लोग गन्दी बस्तियों में रहते हैं ऐसा समाज किस काम का? इसे बदलना होगा। भगत सिंह ने न्यायालय के समझ नई सामाजिक व्यवस्था की जो रूपरेखा दी वह बड़े-बड़े दार्शनिकों को भी सोचने के लिए बाध्य करती है कि इतनी कम उम्र में इस व्यक्ति ने गहन चिन्तन-मनन का समय भला कब निकाला होगा?

असेम्बली में विस्फोट के मूल में उद्देश्य अपने क्रान्तिकारी विचारों को लोगों तक पहुंचाना था। उनके वक्तव्य उस समय के प्रचलित अखबारों में प्रकाशित हुए, उनकी नई विचार पद्धति के साथ जोशीली भाषा और कष्ट झेलने के लिए आगे बढ़ना यह देखकर सारा देश उनके प्रति आकृष्ट हुआ। उन्होंने कहा था कि हम ये जानते हैं कि पिस्तौल और बम इन्कलाब नहीं लाते। इन्कलाब की तलवार विचारों की सान पर तेज होती है, हमने बम का धमाका करके यही प्रकट करना चाहा है। हमारे इन्कलाब का अर्थ पूंजीवाद और पूंजीवादी युद्धों के कष्टों को समाप्त करना है। उन्होंने न्यायाधीश के सामने स्पष्ट किया कि अगर बम फेंकने वालों का सही दिमाग न होता तो वे खाली जगहों की बजाय बेंचों पर बम फेंकते, लेकिन उन्होंने सही जगह चुनने की जो हिम्मत दिखाई है, उसके लिए उन्हें ईनाम मिलना चाहिए। 12 जून 1921 को हुए असेम्बली बम कांड के मुकदमें में भगतसिंह और बटुकेश्वर दत्त को आजीवन कारावास दिया गया। भगत सिंह जेल से ही अपने लक्ष्य को पूरा करने के लिए जनक्रान्ति करते रहे।

लम्बी भूख हड़ताल की। भगतसिंह ने कहा कि हम इस शर्त पर भूख हड़ताल तोड़ेंगे कि हम सबको एक साथ रहने का मौका दिया जाये। जेल अधिकारियों ने उनकी बात मान ली और उन्हें दाल और फुल्का दिया गया। उस समय भी उन्होंने अपनी जिद मनवाई। आजादी के इन दीवानों को देखने के लिए देश भर से लोग पेशी के दिन अदालत में जाते थे और वहां 'वन्देमातरम्' और 'इन्कलाब जिन्दाबाद' के नारों से आसमान गूंज उठता था।

लाहौर जेल में ही बटुकेश्वर दत्त, अजय घोष, जितेन्द्र सान्याल, यतीन्द्र नाथ दास भी रखे गये थे। इसी बीच सान्डर्स हत्याकाण्ड का मुकदमा भी 10 जुलाई 1929 से शुरू हुआ। भगत सिंह को हथकड़ी लगाने की जब बात हुई तो उन्होंने कहा कि एक क्रान्तिकारी को पुलिस के सिपाही के साथ हाथ बांध कर ले जाया जाये ये न्याय के खिलाफ है और उन्होंने भूख हड़ताल कर दी। न्यायाधीश जब कुर्सी पर बैठते थे तो चारों ओर नारे और राष्ट्रीय गीत गूंजने लगता था, ''सरफरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है। देखना है जोर कितना बाजुए कातिल में है। वक्त आने पर बता देंगे तुझे ऐ आसमां। हम अभी से क्या बताएं क्या हमारे दिल में है''।

जिस समय मृत्यु की भयानक काली छाया मंडरा रही थी, उस समय भी आजादी के इन दीवानों की हंसी और अट्टहास गूंजता रहता था। भगत सिंह कई बार ऐसा व्यंग्य छेड़ते थे या कोई ऐसा पेंचीदा सवाल उठा देते थे कि मजिस्ट्रेट भी चकरा जाते थे। मुकदमें की कार्यवाही 3 महीने तक चलती रही और दुनिया भर के मुकदमों के इतिहास में शायद लाहौर षड्यन्त्र केस ही ऐसा है जिसमें फैसला उस दिन सुनाया गया जिस दिन न अभियुक्त अदालत में हाजिर थे, न गवाह और न वकील। अदालत ने खुद आरोप लगाया और खुद ही फैसला दिया। फैसले में भगतसिंह, राजगुरू और सुखदेव को फांसी की सजा सुनाई गई, 7 को कालेपानी की सजा, एक को सात वर्ष की सजा और एक को तीन वर्ष की सजा दी गई। भगत सिंह को मृत्यु से तनिक भी भय न था, उन्हें न तो व्यक्तिगत चिन्ता थी और न कोई दुःख था।

भगतसिंह जेल में अध्ययन करते रहते थे। हर पत्र में वे पुस्तकों को ही मांग करते थे। पुस्तकों के साथ-साथ वह यहां तक लिख देते थे, कि पुस्तकालय के रजिस्टर में उस पुस्तक का कितना नम्बर है। उन्होंने चार्ल्स डिकेन्स, रीड मेम्सबेनी, गोर्की, मार्क्स, उमर खैयाम, आस्कर वाइल्ड, जार्ज बनार्ड शा और लेनिन आदि का गहन अध्ययन किया था। जब वे अपनी कोठरी में इधर से उधर घूमते थे तो कभी-कभी पुस्तकें छोड़कर मधुर स्वर में गा उठते थे, ''माँ मेरा रंग दे बसन्ती चोला। इसी रंग में रंग के शिवा ने माँ का बंधन खोला।'' उन्हें राष्ट्र और राष्ट्रवासियों की इतनी चिन्ता थी कि उसके सामने अपने कष्टों का कुछ ध्यान ही नहीं था, जेल में ही उन्होंने 'आत्मकथा', मौत के दरवाजे पर, समाजवाद का आदर्श और स्वाधीनता की लड़ाई में पंजाब का पहला उभार जैसी पुस्तकें लिखीं। कुछ पुस्तकें तो छप गईं लेकिन कुछ नहीं छप पाई। जेल में जब कोई मिलने आता था तो कभी-कभी वह कहते थे अगर मैं इन्कलाब जिन्दाबाद का नारा देश के कोने-कोने तक पहुंचा सका तो समझूंगा कि मेरे जीवन का मूल्य मिल गया। उन्होंने जेल से युवकों के नाम सन्देश भेजा था जिसमें अपनी राजनीतिक विचारधारा को स्पष्ट किया था। उन्होंने अपने बारे में कहा था, यह बात प्रसिद्ध की गई है कि मैं आतंकवादी हूँ परन्तु मैं आतंकवादी नहीं हूँ, मैं एक क्रान्तिकारी हूँ जिसके कुछ निश्चित विचार-आदर्श और लम्बा कार्यक्रम है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि हम बम और पिस्तौल से कोई लाभ प्राप्त नहीं कर सकते। हमारा मुख्य लक्ष्य यह है कि मजदूरों और किसानों का संगठन हो।'' भगतसिंह के बलिदान का क्षण ज्यों-ज्यों नजदीक आ रहा था, वह प्रसन्नता और उत्सुकता के साथ उस क्षण की प्रतीक्षा कर रहे थे। अपने छोटे भाई कुलतार सिंह को लिखे पत्र में उन्होंने कहा था- ''फिर जन्म लूँ और मातृभूमि की और सेवा कर सकूँ'' मृत्यु के प्रति उनकी निर्भीकता को देखकर लगता था कि जैसे वह इन्सान नहीं फरिश्ता है। जब उनसे कहा गया कि आखिरी वक्त अपने वाहे गुरु का नाम ले लो और 'गुरुवाणी' का पाठ कर लो तो भगतसिंह ने कहा, ''आखिरी वक्त आ गया है, मैं परमात्मा को याद करूँ तो वह कहेंगे कि यह बुजदिल है, तमाम उम्र तो इसने मुझे याद नहीं किया और मौत सामने नजर आने लगी है तो मुझे याद करने लगा है। लोग यही कहेंगे कि आखिरी वक्त मौत को सामने देखकर इसके पांव लड़खड़ाने लगे।'' जब फांसी की सजा दी गई तो भगतसिंह बीच में थे, अगल-बगल सुखदेव और राजगुरु थे। तीनों मिलकर साथ-साथ गाते हुए चलने लगे, दिल से निकलेगी ना मर कर भी वतन की उल्फत, मेरी मिट्टी से भी खुशबुए वतन आयेगी।

भगत सिंह ने मजिस्ट्रेट को देखकर कहा था 'आप बहुत भाग्यशाली हैं कि आपको यह देखने को नसीब हो रहा है कि भारत के क्रान्तिकारी किस तरह खुशी-खुशी अपने उच्च आदर्शों के लिए मौत को गले लगाते हैं।' उनके पैरों पर न कंपकंपी थी, न चेहरे पर घबराहट। फांसी की फंदा पकड़कर उसे चूम कर तीनों ने एक साथ गर्जना की, ''इन्कलाब जिन्दाबाद'' साम्राज्यवाद मुर्दाबाद। उस समय शाम के सात बजकर 30 मिनट थे। इन तीनों क्रान्तिकारियों को समूचा देश उनकी निर्भीकता और राष्ट्रवाद की अदम्य भावना के लिए सदैव याद रखेगा।

(पूर्व निदेशक, आकाशवाणी केन्द्र, नई दिल्ली)

सोशल मीडिया के माधयम से स्वामी आर्यवेश जी से जुड़ें

आर्य युवा सन्यासी व सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आर्यवेश जी से जुड़ने के लिए इस लिंक पर क्लिक करें www-facebook-com/SwamiAryavesh व फेसबुक पेज को लाइक करें व अन्य मित्रों को भी प्रेरित करें।

ई-मेल : aryavesh@gmail.com
Tel. :-011-23274771

प्रतिष्ठा में

अवितरण की दशा में लौटाएँ –
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
"दयानन्द भवन" 3/5 आसफ अली रोड, नई दिल्ली–110002

प्रकृति माता का अद्भुत चमत्कार

एकः सुपर्णः स समुद्रमा विवेश स इदं विश्वं भुवनं वि चष्टे।
तं पाकेन मनसापश्यमन्तितस्तं माता रेहि स उ रेहि मातरम्।।

–ऋ० १०/११४/४

ऋषिः–सध्रिर्वैरूपो घर्मो वा तापसः।। देवता–विश्वेदेवाः।। छन्दः–जगती।।

विनय–संसार में आया हुआ जीव क्या है?यह एक सुपर्ण पक्षी है जो अन्तरिक्ष-समुद्र में विहार करने आया हुआ है। यह अपने ज्ञान और कर्म के पंखों से इधर-उधर उड़ता हुआ इस सब भुवन को विविध प्रकार से देखने का आनन्द ले-रहा है। संसार-सागर में मनोमयादि सूक्ष्म संसारान्तरिक्ष में एक योनि से दूसरी योनि में भोग भोगने के लिए फिरता हुआ और वहां विविध प्रकार के भगों को प्राप्त करता हुआ यह जीव गति कर रहा है, उड़ रहा है। अभी तक जीव को मैं इसी संसाराकाश के विकारी सुपर्ण के रूप में देखता रहा हूँ, पर आज समीपता से देखा है, ज्ञानपरिपक्व हुए मन से इसे समीपता से देख रहा हूँ, तो इस जीव-प्रकृति-संयोग को मैं और ही रूप में देख रहा हूँ कि माता उसे चूम रही है और वह माता को चाट रहा है। प्राकृति माता मैं कहूंगा परमेश्वरी प्रकृति-जीव से प्रेम कर रही है और जीव इस माता से सुख पा रहा है। जीव के प्रकृति से जुड़ने का, जीव के संसार में आने का यही रहस्य है। कई ऋषि कहते हैं कि जीव और प्रकृति का संयोग लूले और अन्धे का संयोग है, पर यह बात शायद परमेश्वरहीन प्रकृति के विषय में होगी। परमेश्वरी प्रकृति तो अन्धी नहीं है। मुझे तो यह सम्बन्ध माता और पुत्र का लगता है। इसलिए यह सम्बन्ध केवल भोग में नहीं किन्तु अपवर्ग में (अपवर्ग के भोग में) भी बना रहता है। पुत्र माता के बिना नहीं रह सकता और माता पुत्र को चाहती है। ऋषि ने ठीक कहा है ''पृथिवी सब भूतों को मधु है और सब भूत पृथिवी को मधु हैं।'' वास्तव में दोनों एक-दूसरे से सुख पा रहे हैं और एक-दूसरे को सुख दे रहे हैं। क्या हम ही प्रकृति से सुख पाते हैं और प्रकृति हमसे सुख नहीं पाती?नहीं। तनिक प्रकृति को बेजान मत समझो, प्रकृति को ''परमेश्वर की प्रकृति'' के रूप में देखो।

शब्दार्थ–एकः सुपर्णः=एक सुपर्ण पक्षी है सः=वह समुद्रम्=इस संसारान्तरिक्ष के समुद्र में आविवेश=आया है सः=वह इदं विश्वं भुवनम्=इस सम्पूर्ण संसार को विचष्टे=विविध प्रकार से देखता है, इसका मज़ा लेता है, परन्तु तम्=उसे पाकेन मनसा=परिपक्व ज्ञानवाले मन से अन्तितः=समीपता से अपश्यम्=देखा है तो मैं देखता हूँ कि तम्=उसे माता=माता रेहि=चूम रही है सः उ=और वह मातरम्=माता को रेहि=चाट रहा है।

साभार- 'वैदिक विनय' से
आचार्य अभयदेव विद्यालंकार

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा 25 हजार वेद सैट प्रकाशित करने की महत्त्वाकांक्षी योजना

घर–घर तक पहुँचाई जायेगी परमात्मा की वेद वाणी

चारों वेदों का सम्पूर्ण हिन्दी भाष्य

(महर्षि दयानन्द, तुलसीराम स्वामी एवं पं. क्षेमकरण दास कृत)

(10 खण्ड, 9 जिल्दों में)

लागत मूल्य 4100/- रुपये

भारी छूट पर उपलब्ध

4100/- रुपये का एक वेद सैट 25 प्रतिशत की छूट पर उपलब्ध है

10 अथवा उससे अधिक वेद सैट लेने पर 30 प्रतिशत की छूट दी जायेगी

प्रत्येक आर्य समाज, स्कूलों के पुस्तकालयों, वाचनालयों तथा प्रत्येक घर में परमात्मा की वाणी वेदों का होना आवश्यक है। अधिक से अधिक संख्या में अग्रिम आदेश भेजकर भारी छूट का लाभ उठायें। डाक व्यय 200/- रुपये अलग से देना होगा। प्रारम्भिक स्तर पर 25 हजार वेद सैट प्रकाशित करने की योजना क्रियान्वित की जायेगी।

अपना आदेश 'सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा' के नाम चैक/बैंक ड्राफ्ट द्वारा ''दयानन्द भवन'' 3/5 आसफ अली रोड, नई दिल्ली-2 के पते पर अग्रिम भेजकर अपना वेदों का सैट बुक करा सकते हैं।

–: प्रकाशक :–

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, ''दयानन्द भवन'' 3/5 आसफ अली रोड, नई दिल्ली–110002

प्रो० विट्ठलराव आर्य, सभा मंत्री, प्रकाशक व मुद्रक द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, 3/5 महर्षि दयानन्द भवन, (रामलीला मैदान/आसफ अली रोड), नई दिल्ली-110002 के लिए प्रकाशित तथा ज्योति प्रिंटिंग प्रेस, ई-94, सैक्टर-6, नोएडा-201301 से प्रकाशित एवं मुद्रित। (फोन : 011-23274771, 23260985 टेलीफैक्स : 23274216)

सम्पादक : प्रो० विट्ठलराव आर्य (सभा मन्त्री) मो.:0-9849560691, 0-9013251500 ई-मेल : sarvadeshik@yahoo.co.in, sarvadeshikarya@gmail.com वैबसाइट : www.vedicaryasamaj.com

वैदिक सार्वदेशिक साप्ताहिक में छपे लेखों तथा विचारों से सम्पादक या सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की सैद्धान्तिक मतैक्यता होना अनिवार्य नहीं है।